आधुनिक भारत मे किसान आंदोलन एक ऐतिहासिक अध्ययन

प्रा. डॉ, भोसले मृणल गुलाबराव
इतिहास विभाग प्रमूख
जिजामाता महाविदद्यालय भेंढा
बुदुक, ता.नेवासा, जि.अहमदनगर

प्रस्तावना .

भारत की अर्थव्यवस्था में कृषि की महत्वपूर्ण भूमिका है। कृषि हमारे आर्थिक सामाजिक एवं आध्यात्मिक उन्नति का माध्यम रही है। भारत के लोग कृषि को एक उत्सव के रूप में मनाते रहे हैं। स्वतंत्रता से पूर्व और स्वतंत्रता के बाद भारत में एक लंबी अवधि व्यतीत होने के बाद भी भारतीय किसानों की दशा में सिर्फ 19-20 का ही अंतर दिखाई देता है। समृद्ध किसानों की गिनती उंगलियों पर की जा सकती है। आज भी खेती-किसानी गहरे संकट में खेती के विकास को हरित क्रांति" का कंपनियों के पक्ष में ही लाभ होता दिखाई दे रहा है भारत की पहचान जहां उन्नत खेती तथा खेती से जुड़े उद्योगा कलाओं उत्पादों और कारोबारों से भी वहॉ स्वतंत्रता के बाद प्राथमिकता उद्योग और उससे जुड़े तकनीकी विकास एवं व्यवसाय हो गए। इसमें खेती पर संकट उत्पन्न होने के साथ ही किसानों को भी संकटग्रस्त होना पड़ा।

शोध के उद्देश

1 भारत के किसान आंदोलन के कार्य को उजागर करना ।

2 किसान आंदोलन का औद्योगिकीकरण क्षेत्र के कार्य योगदान स्पष्ट करना।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद राज्य के संरक्षण में प्रायः सभी राज्यों में भूमि सुधार संबंधी नये कानूनों के निर्माण के बाद किसानों के बीच एक नये भू-स्वामी वर्ग का उदय हुआ। वर्ष 1950 में हिंद किसान पंचायत के प्रथम राष्ट्रीय अधिवेशन के अध्यक्षीय भाषण में लोहिया ने नये परिवेश में किसान आंदोलन के लिए निम्न लक्ष्य बताए जीतने वाले की तुरंत सरकारी आदेश द्वारा जमीन दी जाए परती जमीन के लिए भी सेना बनाई जाए छोटी मशीनों द्वारा औद्योगीकरण किया जाए का पुनर्वितरण हो और प्रत्येक परिवार को 20 बीघा जमीन और मिले खेतिहर वस्तुओं और औद्योगिक वस्तुओं की कीमत में सामंजस्य होना चाहिए।[1]

पिछले तीन दशकों में अनेक सशक्त किसान आंदोलन हुए। तमिलनाडु कर्नाटक महाराष्ट्र गुजरात पंजाब पश्चिमी उत्तर प्रदेश हरियाणा आदि राज्यों में लाखों की संख्या में किसान अपनी मांगों की लेकर सड़कों पर निकले। बाद में उड़ीसा राजस्थान आदि में भी किसानों ने आंदोलन किए। अस्सी और नब्बे के दशक में भारत में अनेक किसान आंदोलन हुए किसानों के बड़े-बड़े धरने एवं रैलियाँ हुई। इनमें लाखों किसानों ने भाग लिया। किसानों का शोषण कृषि उपज का उचित दाम न मिलना किसानों पर बढ़ता कर्ज किसानों पर बढ़ते हुए शुल्क बिजली के बढ़ते बिल आदि उनके प्रमुख मुद्दे थे। लेकिन किसानों की प्रमुख मांगें पूरी होना तो दूर उनकी हालत और खराब होती गई। वैश्वीकरण की नीतियों ने उसे बड़ी संख्या में आत्महत्याओं के कगार पर पहुंच दिया।

नेशनल एकाउंट्स डाटा के अनुसार कृषि अपने बुरे दौर से गुजर रही है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार प्रतिवर्ष औसतन 15168 किसान आत्महत्या को मजबूर हो रहे हैं। इनमें के लगभग 72 प्रतिशत ऐसे छोटे किसानों को है जिनके पास 2 हेक्टेयर से भी कम जमीन है। पिछले दिनों देश के लगभग 187 किसान संगठन संसद मार्ग पर अपनी मांगों को लेकर आंदोलन करते रहे। पंजाब हरियाणा मध्य प्रदेश महाराष्ट्र उत्तर प्रदेश आदि राज्यों में कर्जमाफी एवं समर्थन मूल्य में वृद्धि की मांग पर किसान संघर्षरत है। मंदसौर में पुलिस की गोली से छह किसानों की मौत हुई। महाराष्ट्र में भी ऐसी ही घटनाएं हुई भीषण सूखे और सर्वाधिक किसान आत्महत्या के बाद विदर्भ क्षेत्र मौत का गवाह बना यवतमाल सहित इस क्षेत्र में 40 से अधिक किसानों की मौत जहरीली अवैध कीटनाशकों की वजह से हुई।[2]

किसान आंदोलन की असफलता के लिए उनका नेतृत्व मुख्य कारण रहा किसानों को मांगों को पूरा करने के लिए सरकारी नीतियों को बदलने और सत्ता को प्रभावित करने के लिए कोई संयुक्त रणनीति या योजना नहीं बनाई गई। अन्य शोषित

और वंचित तबकों के आंदोलनी के साथ किसान आंदोलन एकता स्थापित नहीं कर पाया। किसानों की संख्या मजदूरों से अधिक होने के कारण किसान आंदोलन ट्रेड यूनियन की तरह नहीं चलाया गया।

किसानों और खेती पर संकट

आज देश में खेती का योगदान कुल अर्थव्यवस्था में 14 प्रतिशत के लगभग होने पर भी इससे गरीब 60 प्रतिशत लोगों को रोजगार मिल रहा। लेकिन भारत में अभी तक खेती और किसान को अर्थनीति में जितना महत्व मिलना चाहिए था वह नहीं मिल पाया है। भारत को रचना ऐसी है कि जब तक खेती संकट से नहीं निकलेगी किसान खुशहाल नहीं हो सकता। यहां खेत का औसत आकार 115 हैक्टेयर है जो काफी छोटा है। यह आकार 1970-71 से लगातार घट रहा है। लघु और सीमांत भू-स्वामित्व 20 हैक्टेयर से कम है जो कुल भू-स्वामित्व का 72 प्रतिशत है। छोटी काश्तकारी की प्रधानता कृषि क्षेत्र में बड़े पैमाने पर आर्थिक किफायत की राह में मुख्य बाधा है। इसके अतिरिक्त छोटे और सीमांत किसानों के पास मोलभाव की शक्ति कम है क्योंकि उनके पास बिक्री योग्य अशेष कम होता है और वे बाजार की कीमत स्वीकार करने वाले होते हैं। आड़े पैमाने पर कृषि के लाभ के लिए लघु क्षेत्र वाले किसानों की बहुलता एक बड़ी चुनौती है।[3]

भारत में 60 प्रतिशत खेती बारिश पर आधारित है। केवल 40 प्रतिशत खेती के लिए सिंचाई के साधन उपलब्ध हैं। काफी समय से फसलों के सही दाम की मांग की जा रही है। किसानों को उनकी फसल का उचित मूल्य मिलना चाहिए। इसी आधार पर न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी प्रणाली शुरू की गई थी। पहले केवल गेहूं और धान के लिए यह व्यवस्था की गई वर्ष 1986 में यह 22 जिलों के लिए लागू किया गया है। पंजाब हरियाणा पूर्वी व उत्तरी राजस्थान आंध्र प्रदेश मध्य प्रदेश और पश्चिमी उत्तर प्रदेश आदि को छेड़कर कहीं भी एमएसपी पर फसल खरीदने की कोई व्यवस्था नहीं है। इस कारण किसान साल भर मेहनत करके फसल तैयार करता है लेकिन उसे लागत भी नहीं मिल पाती, जबकि बिचौलिए मोटा लाभ कमा रहे है। लेकिन इसमें भी अनेक खामियां हैं जिन्हें दूर करने की आवश्यकता है। इन खामियों की दूर करने के लिए किसान आयोग का गठन किया गया था। फल एवं मौसमी सब्जियों का न्यूनतम समर्थन मूल्य निर्धारित नहीं होता। जिन फसलों का एमएसपी निर्धारित होता है वह भी किसानों को नहीं मिल पता है।

संघर्ष भरा कृषक जीवन

हमारी कृषि आबादी में प्रत्येक वर्ष 194 प्रतिशत की वृद्धि हो रही है औसत जोत आकार प्रत्येक वर्ष छोटा होता जा रहा है। खेती की लागत जोखिम प्रतिफल पद्धति प्रतिकूल होती जा रही है। इसका परिणाम यह हुआ कि किसान अधिकाधिक ऋणी होते जा रहे हैं। आजादी के बाद और उदारीकरण औद्योगीकरण एवं अन्य आर्थिक सामाजिक सुधारों के माध्यम से उद्योगों का कायाकल्प हुआ और उद्योगों को घाटे से उबरने के लिए करोड़ों रुपये की सरकारी राहत दी जाती रही है लेकिन जब कृषि क्षेत्र की बात आती है किसानों के कर्ज की बात आती है तो इतनी कम राशि दी जाती है उससे किसानों को लाभ तो नहीं होता है हां उनका मखौल जरूर उड़ाया जाता है। किसानों की बेहाली का अंदाजा उसके कर्ज पर लगाया जा सकता हैं। कृषि राज्य मंत्री पुरुषोत्तम रुपाला ने नवंबर 2016 में जानकारी दी कि किसानों पर वर्तमान में देशभर के किसानों पर 12 लाख 60 हजार करोड़ रुपये का कर्ज है। इसे माफ करने के लिए राज्य सरकारों के पास पैसा ही नहीं है जो किसान प्रकृति की रक्षा के साथ सभी जाति वर्ग को कृषि से रोजगार देता था आज वह समय के साथ अपने में बदलाव नहीं करने के कारण संकटों से जूझ रहा है। कई बार किसान खुद को जमीन में गाड़कर विरोध प्रदर्शन कर रहे है। पिछले लगभग 20 वर्षों से भारत के किसान लगातार आत्महत्या करने पर मजबूर हो रहे हैं। वर्ष 1997-98 में किसानों द्वारा की ग आत्महत्या विदर्भ महाराष्ट्र के बाद बुंदेलखंड आंध्र प्रदेश और ते मैं भी सिलसिला शुरू हो गया। एनसीआरबी की रिपोर्ट के अ पहली बार वर्ष 1997 में आत्महत्याओं को रिकार्ड में दर्ज किया गया। इसके अनुसार वर्ष 1997-98 में लगभग 6000 किसानों ने आत्महत्याएं की। किसानों की आत्महत्याओं का पहला कारण ऋण और दूसरा प्राकृतिक आपदाओं से फसल का नुकसान है। इसके साथ ही कृषि उपज से होने वाली कमी खराब बीज और उर्वरक की उपलब्धता भी अन्य कारण है। इस कारण एक बड़ा वर्ग किसानी छोड़ रहा है। वह किसानी की बजाय शहरी मजदूरी को अच्छा

समझने लगा है। विदेशी कंपनियों ने भी बेतहाशा शोषण किया है। देशी बीज और खाद के स्वरूप की कुछ देशी और कुछ विदेशी कंपनियों ने खत्म कर दिया है।[5]

सारांश -

अक्सर यह देखा जाता है कि अनाज क्रय केंद्र पर दलालों की मिलीभगत से अनाज व्यवसायी ही किसानों से सस्ते दर पर खरीद कर क्रय केंद्र पर अपना अनाज बेच देते हैं। इससे न्यूनतम समर्थन मूल्य पर किसान अपना अनाज बेचने में सफल नहीं हो पाता है। जमाखोर किसानों के उत्पाद का उचित मूल्य नहीं दे रहे है। उदाहरण के लिए किसानों से कई बार प्याज 2 रुपये किलो की दर से खरीदने के बाद जमाखोर 60 रुपये की दर से बेच देते हैं। भूमि अधिग्रहण को लेकर भी देश भर के किसानों में असंतोष बढ़ा है। वर्ष 2013 में देश में अंग्रेजी राज के भूमि अधिग्रहण कानून को बदलकर नया कानून बनाया गया है। इस कानून में भी अनेक खामियां है। उचित मुआवजे के लिए किसान अदालत के दरवाजे खटखटा रहे हैं। किसानों की स्थिति सुधारने के लिए आवश्यक है कि ऐसे उपाय किए जाएं जिनसे न सिर्फ उनकी आय बड़े बल्कि फसल की पैदावार भी हो ।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1 आर एल शुक्ल] आधुनिक भारत का इतिहास] दिल्ली निदेशालय दिल्ली 2001 पृ 124

2 सुरेश भारद्वाज] आधुनिक भारत का इतिहास] कांटिनेटल प्रकाशन पुणे 2004 पृ 154

3 आर के परुथी] आधुनिक भारत का इतिहास] लक्ष्मीनारायण प्रकाशन आगरा 2007 पृ 187

4 शांता कोटेकर सुमन वैद्य] आधुनिक भारताचा इतिहास] साईनाथ प्रकान नागपुर 2005पृ 293